संसदीय वाद विवाद

(भाग २—प्रश्न और उत्तर स पृथक् कायवाही)

शासकीय वृत्तान्त

लोक सभा

बुधवार, १८ फरवरी, १९५३

सदन की बैठक दो बजे समवेत हुई।

[**उपाध्यक्ष महोदय** अध्यक्ष-पद पर आसीन थे]

प्रश्न और उत्तर

(देखिये भाग १)

स्थगन प्रस्ताव

मैसूर में मेंगनीज की खानों का यकायक बन्द हो जाना

उपाध्यक्ष महोदय : मुझे मैसूर में मेंगनीज़ की खानों के यकायक बन्द हो जाने से उत्पन्न गम्भीर परिस्थिति के सम्बन्ध में तथा रेलवे द्वारा कम डिब्बे दिये जाने के कारण दस हज़ार मजदूरों के बेरोज़गार हो जाने के सम्बन्ध में एक स्थगन प्रस्ताव की पूर्व सूचना मिली है। कुछ समय से वैगन बहुत कम मिल रहे हैं, इसलिये यह कोई नई बात नहीं हुई है। रेल आय-व्ययक पर चर्चा होगी और इस कमी को पूरा करने के सम्बन्ध में किये गये कार्यों की चर्चा होगी। अतः मैं इसकी अनुमति नहीं देता।

अनुपस्थिति की छुट्टी

उपाध्यक्ष महोदय : मुझे माननीय सदस्यों को यह सूचित करना है कि मुझे श्री ए० के० गोपालन का पत्र प्राप्त हुआ है जिसमें उन्होंने लिखा है कि उन्होंने नवम्बर में आपरेशन करवाया है और वह अस्पताल में हैं। अतः वह इस सत्र में सम्मिलित नहीं हो सकते हैं और जब तक वह स्वस्थ न हो जायें तब तक के लिये छुट्टी चाहते हैं।

क्या सदन श्री ए० के० गोपालन् को इस सत्र में अनुपस्थित रहने की अनुमति देना चाहता है ?

उन्ह छुट्टी की अनुमति दे दी गई।

राष्ट्रपति के अभिभाषण प्रस्ताव—समाप्त

उपाध्यक्ष महोदय: माननीय प्रधान मंत्री।

प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक कार्य मंत्री (श्री जवाहर लाल नेहरू): इस सदन में ह मने इस प्रस्ताव के दौरान में बड़े और छोटे विषयों पर चर्चा की। हमने पूरे विश्व की चर्चा की और भारत की समस्याओं पर विचार किया। किन्तु जिन विषयों की चर्चा हुई उनके सम्बन्ध में उत्तर के दौरान में कुछ कहना मैं कठिन समझता हूं। अतः यदि मैं उन विषयों पर ही जिन्हें मैं अधिक महत्वपूर्ण समझ ता हूं, बोलूं तो सदन इसे ठीक समझेगा। मैं तो यह चाहता हूं कि राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के मामलों पर, छोटे विषयों की अपेक्षा जो कि कम महत्व-पूर्ण हैं, अधिक ध्यान दिया जाता।

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

बोलने से पूर्व मैं इतना कहना चाहता हूं कि मैंने इन मामलों पर यथासम्भव अत्यधिक विचार किया है और माननीय सदस्यों की आलोचना से लाभ उठाने का प्रयत्न किया है। मैं एक बात का खण्डन करना चाहता हूं कि मेरे कार्य बन्धु तथा मैं अपने कार्य से सन्तुष्ट हैं और कुछ करना नहीं चाहते। । मैं इस बात का निर्णायक नहीं हूं कि मेरे अन्दर आत्म तुष्टि है या नहीं। मैं इस बात का विचार भी नहीं कर सकता हूं कि जिस व्यक्ति पर कोई उत्तरदायित्व हो उसमें आत्म तुष्टि भी हो सकती है। यदि वह ऐसा समझता भी है तो भी वह ऐसा नहीं हो सकता। जब मैं इस देश की अथवा विश्व की समस्याओं पर विचार करता हूं तो निस्सन्देह मेरे अन्दर आत्म तुष्टि की कोई भी भावना नहीं होती। आजकल विश्व में जो कुछ हो रहा है उसके विचार से मेरे अन्दर उत्तेजना की भावना पैदा होती है, अथवा इस देश में हम जो कुछ करने का प्रयत्न कर रहे हैं उससे बहुत उत्साह की भावना पैदा होती है और हमारी जो समस्यायें हैं उससे कठिनाई की भावना पैदा होती है। कोई भी व्यक्ति आत्म संतुष्ट नहीं रह सकता। इस सदन के बाहर कभी कभी जो कुछ मैं कहता हूं यदि माननीय सदस्य उसे पढ़ें तो वे इस बात को देखेंगे कि मैं अपने साथियों तथा अन्य व्यक्तियों को आत्म तुष्टि की भावना के विरुद्ध चेतावनी देता रहता हूं। अतः हमारे अन्दर आत्म तुष्टि की भावना नहीं है। हम यह कभी भी नहीं सोचते कि हम सबसे अधिक बुद्धिमान् हैं और हम दुनिया की हर चीज़ के विषय में सब कुछ जानते हैं। अपने सिद्धान्त पर दृढ़ रहने वाले व्यक्ति में ही आत्म तुष्टि की भावना होती है। किसी रुढ़ि पर दृढ़ रहने के कारण संकुचित भावना पैदा होने से ही आत्म तुष्टि की भावना आती है। परिवर्त्तन शील विश्व में संकुचित भावना से आत्मतुष्टि आती है। इसलिये मैंने दूसरे सदन के समान इस सदन में आलोचनाओं को इस अभिप्राय से सुना कि जो कुछ हम कर रहे हैं उससे और अच्छा कर सकें और कुछ समझने और जानने के अथवा जो कुछ हम कर रहे हैं उसमें परिवर्तन करने के अभिप्राय से सुना।

मैं सदन को यह आश्वासन दे सकता हूं कि इस मामले में अभिमान या सम्मान का प्रश्न नहीं है। इस सदन में केवल सरकार पर ही नहीं अपितु बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है और यदि हम छोटे छोटे मामलों पर सम्मान का विचार रखें अथवा मामलों पर अपने दल की दृष्टि से संकुचित रूप में विचार करें तो निस्सन्देह हम छोटे आदमी होंगे। अतः मैंने इन मामलों पर बिना पक्षपात के विचार किया है। श्रीमान् जी मैं आपके तथा सदन के और विरोधी पक्ष के माननीय सदस्य डा० मुकर्जी के प्रति खेद प्रकट करना चाहता हूं कि कल मैं कुछ समय के लिये इतना शान्तचित्त नहीं था और मैं क्रोधावेश में आ गया। अब मैं विरोधी दल के एक माननीय सदस्य द्वारा कल उठाई गई बात कहना चाहता हूं जिनकी अन्तर्वाधा से मैं उत्तेजित हो गया था। माननीय सदस्य प्रो० मकर्जी ने डमडम हवाई अड्डे पर हजारों अमरीकी सैनिक वायुयानों की बात कही। मुझे आश्चर्य हुआ और मैंने इस बात की छानबीन की। जो कुछ माननीय सदस्य ने कहा उसे मैं पढ़ता हूं। उन्होंने आगरा में भारतीय वायु सेना के हवाई अड्डे पर दिसम्बर के आरम्भ में एक अमरीकी सुपर फोर्ट्रेस के उतरने की बात कही। उन्होंने कहा :

"इसका क्या कारण है कि हम यह सुनते हैं.....यदि मेरी बात गलत है तो मैं चाहता हूं कि बाद में प्रधान मन्त्री मेरी बात में सुधार कर दें—कि अक्टूबर १९५२ में

"(ध्यान रखिये अक्टूबर १९५२ में)" डमडम हवाई अड्डे पर ३२५० सेना के वायुयान उतरे। जिसमें से भारतीय वायु सेना के कुल २५ वायुयान थे जब कि अमरीका की वायु सेना के लगभग १२०० वायुयान उतरे।"

यदि बात ऐसी ही होती जैसी कि ऊपर कही गई है तो कोई भी व्यक्ति यह समझेगा कि भारत पर बहुत बड़े पैमाने पर आक्रमण हो रहा था। इन बातों की जांच पड़ताल करने पर यह मालूम हुआ दिसम्बर अथवा किसी अन्य तारीख को आगरा में कोई भी सुपर-फोर्ट्रेस वायुयान नहीं उतरा। अमरीका के दूतालय ने सेना के एक पुराने प्रकार के हवाई जहाज़ को, जो कि गैर-सैनिक काम में लाया जाता है, पालम में रख रखा है। यह वायुयान ९ दिसम्बर को आगरे के हवाई अड्डे पर गया और उसी दिन दिल्ली लौट आया। कलकत्ता के समीप डमडम हवाई अड्डे के सम्बन्ध में बात यह है कि यह हवाई अड्डा अन्तर्राष्ट्रीय मार्ग में पड़ता है और पूर्व से पश्चिम तथा पश्चिम से पूर्व को उड़ने वाले विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनियों के बहुत अधिक वायुयान प्रतिदिन यहां उतरते हैं। ये सब उड़ानें प्रत्येक देश के नियमों तथा अन्तर्राष्ट्रीय नियमों से विनियमित होती हैं कभी कभी, यद्यपि बहुत कम बार, देश में कहीं उतरे बिना ही भारत के ऊपर होकर उड़ने की अनुमति दे दी जाती है। सामान्यतया विदेशी वायुयानों को भिन्न भिन्न प्रकार की जांच पड़ताल के लिये भारत के किसी हवाई अड्डे पर उतरना पड़ता है। विदेशों के सेना के हवाई जहाज़ भारत सरकार को पूर्व स्वीकृति लेकर ही भारत को अथवा भारत होकर उड़ सकते हैं, और ऐसा भारत सरकार के साथ उस राज्य द्वारा किये गये समझौते के अनुसार होता है। विभिन्न प्रकार की सूचना उपलब्ध हो जाने के बाद प्रत्येक मामले में अनुमति दी जाती है। केवल अक्टूबर में ही नहीं पूरे वर्ष १९५२ में विदेशी तथा भारतीय कुल ४५९ हवाई जहाज़ डमडम में उतरे। इनमें ११८ अमेरिका की वायु सेना के थे। इनमें से किसी भी हवाई जहाज़ में अस्त्र शस्त्र या सैनिक नहीं थे। भारतीय वायु सेना का प्रधान कार्यालय पालम में है अतः डमडम में अपेक्षाकृत बहुत कम हवाई जहाज़ उतरते हैं।

हमारे सामने दो बड़ी समस्यायें हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति तथा देश की स्थिति हमारे सामने है। इन्हीं दो श्रेणियों में प्रायः, सभी बातें आ जाती हैं। यद्यपि हम उन पर पृथक् पृथक् विचार कर सकते हैं, ये दोनों कुछ सीमा तक परस्पर सम्बद्ध हैं और दोनों की एक दूसरे पर प्रतिक्रिया होती है। हमारी तो अपने देश की स्थिति में ही रुचि है क्योंकि हमें इन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, क्योंकि हमारी इच्छा देशवासियों की दशा तथा जीवन स्तर सुधार कर अपने देश के स्तर को ऊंचा उठाना है। हम देश की गरीबी को दूर करना चाहते हैं और लोक हितकारी राज्य के आदर्श को अधिकाधिक बढ़ाना चाहते हैं जो कि हमारा लक्ष्य है और जिसका राष्ट्रपति ने निर्देश भी किया है। मैं समझता हूं कि इस सदन में कोई भी हमारे इस लक्ष्य से असहमत नहीं होगा। किन्तु प्रश्न तो यह है कि इसको किस प्रकार प्राप्त किया जाय। इसके सम्बन्ध में मतभेद हो सकता है। ऐसा कोई कारण नहीं है कि किसी एक या दूसरे पहलू पर अधिक ज़ोर न दिया जाय। नये भारत का निर्माण करने के लिये बहुत से उत्साहजनक कार्य हैं। इस देश को एक लोक हितकारी राज्य बनाने के लिये भी बहुत से कार्य हैं जिससे हम लाखों आदमियों के स्तर को ऊंचा उठा सकते हैं। क्या इससे भी अधिक कोई और उत्साहवर्धक कार्य हो सकता है? किन्तु फिर भी हम जानते हैं कि हमें किन बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, इनमें कुछ कठिनाइयाँ तो ऐसी हैं जिनका हमें इतने दिन तक पराधीन

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

रहने के बाद पराधीनता से उत्पन्न स्थिति के परिणामस्वरूप सामना करना पड़ा, जबकि देश उस प्रकार से आगे नहीं बढ़ा जैसा कि इसे बढ़ना चाहिये था : अतः इस प्रश्न पर जब हम विचार करते हैं तो हमें एक साथ बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। पूरे भारत का विचार करते समय कई शताब्दियों की बातें बीसवीं शताब्दी की समस्याओं से उलझ जाती हैं। यह इतना सरल मामला नहीं है कि ऐसे वाद विवाद से इस पर निर्णय हो जाय। भारत में बड़े बड़े प्रदेश हैं। और आर्थिक विकास, औद्योगिक दशायें और कृषि सम्बन्धी दशाओं की भिन्न भिन्न स्थितियां रही हैं और हम इन सब में विकास करने का प्रयत्न कर रहे हैं और यदि हम इन लोगों की दशा में जादू की तरह से कोई परिवर्त्तन नहीं कर सकते तो इसके लिये हम दोषी नहीं हो सकते। अतः जब हम कठिनाई पूर्ण इतने बड़े कार्य में लगे हैं तो हम अन्तर्राष्ट्रीय बातों को कम समय देते हैं। किन्तु हम अपनी मर्ज़ी के अनुसार बहुत कम कर सकते हैं क्योंकि हमें हर समय अन्तर्राष्ट्रीय कार्यों में भाग लेना पड़ जाता है, क्योंकि उनका हमारे जीवन पर प्रभाव पड़ सकता है और अन्य देशों के समान भारत को भी उनमें अवश्य ही भाग लेना पड़ता है। अतः हम इसे चाहें या न चाहें हमें उनमें भाग लेना पड़ता है। हम अन्तर्राष्ट्र के अंग हैं और भारत जैसा कोई बड़ा देश उससे अलग नहीं रह सकता। अतः हम अन्तर्राष्ट्रीय कार्यों में भाग लेते हैं जो प्रतिदिन जटिल होते जाते हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना सात आठ वर्ष पूर्व हुई थी और इसमें विश्व शान्ति रखने की मानव भावना का प्रतिनिधित्व है। इसने पुराने राष्ट्र संघ की असफलताओं से लाभ उठाने का प्रयत्न किया। पुराने राष्ट्र संघ का स्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के रूप में नहीं था। बड़े देश इससे बाहर रहे और उन्हें बाहर रखा गया। संयुक्त राष्ट्र संघ में विश्व के सभी प्रकार के देश सम्मिलित हुए यद्यपि इन देशों की आर्थिक अथवा राजनैतिक नीति भिन्न भिन्न है। संयुक्त राष्ट्र संघ की एक विशेषता यह है कि यह सब देशों की संस्था है। इसका मुख्य उद्देश्य शान्ति बनाये रखना है और राष्ट्रों के आपस के प्रयत्न से झगड़ों को यथासम्भव शान्तिपूर्ण तरीकों से तय करना है। सदन को मालूम होगा कि संयुक्त राष्ट्र संघ ने कुछ बड़ी शक्तियों के लिये निषेधाधिकार रखा है। इस बात की आलोचना करना बड़ा आसान है कि यह नियम अनुचित है तथा प्रजातन्त्र के विपरीत है किन्तु इसमें वास्तविकता की भावना है। इसका अर्थ यह है कि संयुक्त राष्ट्र संघ बड़ी शक्तियों पर प्रतिबन्ध नहीं लगा सकता क्योंकि इस मामले में ये शक्तियां निषेधाधिकार का प्रयोग कर सकती हैं, और क्योंकि इन शक्तियों पर प्रतिबन्ध लगाने का मतलब युद्ध है। यदि सयुक्त राष्ट्र संघ विश्व युद्ध नहीं चाहता तो इसे ऐसा एक खण्ड रखना ही था। अब हम यह देखें कि इसका विकास कैसे हुआ।

हम देखते हैं कि विश्व एकता की भावना, जिसे लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ ने कार्य आरम्भ किया समाप्त हो चुकी है। इसमें सब से बड़ी बात यह है कि चीन जैसा बड़ा देश इस में नहीं है। उसे कुछ बड़े देशों ने मान्यता प्रदान नहीं की है। इस में चीन की वर्तमान सरकार अथवा वहां की स्थिति को चाहने या न चाहने का प्रश्न नहीं है किन्तु प्रश्न यह है कि इसमें विश्व के एक बड़े देश का प्रतिनिधित्व नहीं है। अतः यह बात विश्व एकता के मूल सिद्धान्त में आती है और ऐसी ही बात से राष्ट्र संघ असफल रहा। मैं समझता हूं कि यह भी बड़ी समस्याओं में से एक है और इसमें से नई समस्यायें पैदा हुई हैं। इसमें यह

प्रश्न नहीं है कि "हम इस बात के लिये सहमत हों कि उसमें चीन सम्मिलित हो" अथवा "यह उसमें सम्मिलित न हो।" यह सम्मति व्यक्त करने का प्रश्न नहीं है किन्तु इस बात को समझने का प्रश्न है एक बड़े देश का जहां का शासन सुदृढ़ है और जो शक्तिशाली है, उसमें प्रतिनिधित्व नहीं है। एक कठिनाई और पैदा हो गई। यह संस्था विश्व शान्ति की स्थापना के लिये बनी थी किन्तु आज यह युद्ध संचालन कार्य में संलग्न है और इस कारण इसका शान्ति स्थापना का कार्य कम हो गया है। यह एक प्रकार की कठिनाई पैदा हो गई है। हम किसी व्यक्ति को दोष दिये बिना स्थिति का विश्लेषण करना चाहते हैं। और यह समस्या उत्पन्न होती है कि क्या दुनिया इतनी बड़ी हो गई है कि ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की आवश्यकता पड़े। लोग एक विश्व संघ की बात करते हैं और बहुत से बुद्धिमान व्यक्ति इस बात से सहमत हैं। सदन के बहुत से सदस्य इससे सहमत होंगे। हम देखते हैं कि संयुक्त राष्ट्र संघ को भी बहुत सी कठिनाइयों की सामना करना पड़ रहा है क्योंकि बहुत से राज्य अब भी अपने आपको सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न समझते हैं और इसी प्रकार की अन्य कठिनाइयां हैं। अब प्रश्न यह है कि क्या इस बात की कोई सम्भावना है कि राजनैतिक, आर्थिक तथा अपनी नीतियों में भिन्न दृष्टि-कोण वाले देश इस नई संस्था में एक दूसरे से सहयोग कर सकते हैं अथवा उन्हें अलग अलग रहना चाहिये? सदियों पहिले ये देश अलग अलग थे किन्तु आजकल यह असम्भव हो गया है। इन देशों के अच्छे सम्बन्ध हो सकते हैं और यदि नहीं तो शत्रुतापूर्ण सम्बन्ध होंगे। तो क्या किसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था में भिन्न भिन्न विचारों के देश कह सकते हैं? इन सब देशों के साथ रहते हुए यह संस्था कार्य कर सकती है। यह आदर्श था। जब संयुक्त राष्ट्र संघ ने कार्य आरम्भ किया था तो अमेरिका और रूस ने सहयोग दिया था। अब वे काफी पृथक् हो गये हैं। मैं तो समझता हूं कि ये एक दूसरे के कार्यों में दखल दिये बिना अपनी नीति पर चलते हुए इसमें कार्य कर सकते हैं। एक दूसरे के कामों में दखल देने में कठिनाइयां पैदा होती हैं। दखल करने के मामले में एक दूसरे पर दोष लगाये जाते हैं। मैं यह इसिलिये कह रहा हूं कि सदन अन्तर्राष्ट्रीय बातों को समझ सके।

टैक्नोलोजी के विकास का भी एक महत्वपूर्ण मामला है। जिसे हम पूरी तरह से समझते हैं। टैक्नोलोजी का संचरण विकास तथा युद्ध कला पर बहुत प्रभाव पड़ा। इसका ऐसा प्रभाव पड़ा है कि युद्ध का इतना भयंकर परिणाम होगा कि उससे इतनी अधिक बरबादी होगी कि लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये युद्ध किया जायगा वह भी नष्ट हो जायगा। युद्ध का रूप ऐसा हो गया है कि उससे सर्वोत्तम लक्ष्य भी प्राप्त नहीं हो सकता और विजय होने पर भी आपकी इच्छा के विरुद्ध बातें होती हैं।

हम दूसरे देशों पर हथियारों के ज़ोर से अथवा आर्थिक दबाव से अनुचित प्रभाव नहीं डाल सकते और न हम अपनी विचार धारा के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय कार्यों पर नियन्त्रण रख सकते। हम दूसरे देशों को अन्तिम चेतावनी नहीं दे सकते और न कठोर भाषा में दूसरे देशों से कुछ करने के लिये कह सकते हैं जब तक कि हम बाद में कुछ कर सकने योग्य न हों। विरोधी दल के सदस्यों ने बार बार यह कहा कि राष्ट्रपति ने बड़ी दुर्बल भाषा का प्रयोग किया। उन्हें यह याद रखना चाहिये कि अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के सम्बन्ध में शक्ति कठोर भाषा का प्रयोग करने में नहीं होती और न वह नारे लगाने में होती है अपितु वह तो अन्य कार्यों में होती है। और इस शक्ति के अतिरिक्त किसी राष्ट्र को अधिक शोर गुल नहीं मचाना चाहिये। यह

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

परिपक्वता का चिन्ह नहीं है। आजकल देश एक दूसरे को दोष देते हैं। हम इन समस्याओं के होते हुए भी उठे हैं। विश्व के दो बड़े देश एक दूसरे से घृणा करते हैं और एक दूसरे को नीचा दिखाना चाहते हैं और एक दूसरे से डरते हैं। आजकल हम भय और घृणा के वातावरण में रह रहे हैं जो कि किसी देश के लिये बहुत ही हानिकारक है।

हम भय और घृणा के वातावरण को कम करने में सहायक हो सकते हैं। यद्यपि यह हम बहुत अधिक नहीं कर सकते। हमें कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये जिससे ये बातें बढ़ें। हमें न तो शोर शराबा करना चाहिये और न किसी को दोष देना चाहिये। जहां हम किसी की सहायता कर सकते हैं वहां हमें कुछ वास्तविक कार्य करके सहायता करनी चाहिये। हम अपने कार्यों के सम्बन्ध में बहुत सावधान रहे हैं। हमने यह नहीं किया कि एक देश के काम को ठीक बताया तथा दूसरे देश के काम को गलत बताया। अपने कार्य में सफलता के लिये हमने दूसरे देशों की सम्मति को जानने का प्रयत्न किया है।

फिर यह कोरिया-संकल्प था। इसके विषय में मैं पहिले कह चुका हूं हमने यह जानने का बहुत प्रयत्न किया कि अन्य देश किस बात को स्वीकार करने को तैय्यार हैं। हमने यह जानने का बहुत प्रयत्न किया और उस संकल्प में हमने ९० अथवा ९५ प्रतिशत वह रखा जो सम्बद्ध देशों ने हम से पृथक् रूप से कहा था। मैं किसी बात को उचित नहीं ठहरा रहा हूं किन्तु मेरा कहना तो यह है कि हमने बिना किसी बात का पक्षपात किये हुए दूसरों के दृष्टिकोण को ठीक प्रकार से रखने का प्रयत्न किया। हम इसमें असफल रहे। किन्तु यह अनुचित है कि हमें इस बात के लिये दोष दिया जाय कि हमने इस मामले में पक्षपात किया है। विरोधी दल के कुछ सदस्य बार बार यह कहते हैं कि हम अमेरिका के हाथ की कठपुतली हैं और आंग्ल-अमरीकी गुट्ट में हैं। मैं चाहता हूं कि वे इस तरह के नारे न सीखें और ऐसी बातें बार बार न कहें। शान्ति प्राप्त करने के लिये शान्तिपूर्ण तरीकों से काम लेना चाहिये। गांधीजी ने सदा साधनों तथा उद्देश्य पर ज़ोर दिया। शान्ति स्थापना के लिये आप युद्ध के तरीकों से काम नहीं ले सकते। बहुत से ऐसे देश हैं जो कि युद्ध के तरीकों से शान्ति स्थापना की बातें करते हैं। यह बात किसी एक दल पर लागू नहीं होती। अब तो शान्ति का अर्थ युद्ध समझा जाता है। आज समस्त अन्य देशों के लोग जिन में हम भी सम्मिलित हैं सैनिक मनोभावना के शिकार हो गये हैं। आज राजनीतिज्ञों का स्थान सैनिकों ने ले लिया और सभी बातों को सैनिक दृष्टि से देखा जाता है। यह एक खतरनाक बात है।

मैं यह मानता हूं कि सैनिक अपनी जगह पर बहुत ठीक हैं किन्तु जैसा कि एक फ्रांसीसी राजनीतिज्ञ ने कहा कि युद्ध का संचालन सैनिक के हाथ में देना खतरनाक है फिर शान्ति की आशा का तो सवाल ही पैदा नहीं होता। इस सैनिक मनोवृत्ति का फैलना हमारे लिये खतरनाक है। परन्तु अब हम इसका सामना किस प्रकार करेंगे। जहां तक भारत का सवाल है मैं इस बात को मानता हूं कि हम दोनों में बहुत अधिक अन्तर नहीं कर सकते हैं। मैं यह नहीं चाहता कि सदन यह अनुमान लगाये कि हम इस का भार अपने कंधों पर ले सकते हैं तथा इसे अपनी इच्छानुसार बदल सकते हैं, हम ऐसा कर ही नहीं सकते। पर हम अन्य लोगों को सहयोग दे सकते हैं। हम शान्ति के वातावरण को स्थापित करने में सहायता दे सकते हैं और सम्भव है कि हम इससे अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के रास्ते पर लग जायें। हम प्रयत्न करते

हैं; हम असफलता होती है। किन्तु इससे तो विश्व को भी असफलता प्राप्त होती है और यहां पर मामला समाप्त हो जाता है।

एक दूसरी बात यह है कि हम शान्ति और युद्ध की बातें करते हैं तथा इसमें कोई सन्देह नहीं है कि युद्ध के अनेक कारण होते हैं, कुछ के विषय में तो हम चर्चा करते हैं किन्तु कुछ ऐसे भी रह जाते हैं जिनके सम्बन्ध में हम कुछ नहीं कह पाते। परन्तु एक बात पक्की है कि संसार में अनेक बातों के कारण जिनमें टैक्नोलोजिकल राजनीति के विकास जैसी बातें हैं, संसार के लोग मेरा अभिप्राय जनता से है, चुपचाप बैठना पसन्द नहीं करते। यह एक अच्छी बात है। वह अधिक सहन करने के लिये तय्यार नहीं, उपनिवेशों में रहने वाले लोग अब उस व्यवहार को सहन नहीं करना चाहते जो कि उन के साथ सदियों से होता आया है। अतएव वह जिस चीज को देखते हैं उसी को स्वतन्त्रता दिलाने वाली शक्ति समझते हैं। हो सकता है कि स्वतन्त्रता दिलाने वाली शक्ति उन्हें स्वतन्त्रता न दिला सके और उनकी दशा और भी खराब हो जाये—किन्तु इसका कोई महत्व नहीं है। परन्तु बात यह है कि संसार के लोग आज कुछ करना चाहते हैं उनका मन बैचैन है वे चाहते हैं कि उन्हें सहारा मिले और उनका कोई पथ प्रदर्शन करे।

इन परिस्थितियों में यह सोचना पड़ता है कि इन प्रत्यक्ष शिकायतों को तथा उन सरकारों को किस प्रकार दूर किया जाय जो जनता को दबा कर रख ना चाहती है। दूसरे शब्दों में यह समस्या उपनिवेशवाद से सम्बन्ध रखती है जो कि पिछले महायुद्ध के पश्चात् काफी सीमा तक हल की जा चुकी है। किन्तु अभी यह अच्छी तरह से हल नहीं हुई है और इसीलिये जब यह हल हो जायेगी तो संसार के लोगों में असन्तोष का एक कारण दूर हो जायेगा। एक दूसरी बात भी है जिसका सम्बन्ध यद्यपि इस समस्या से नहीं है किन्तु कुछ कुछ इसी प्रकार की है अर्थात् अन्य देशों, एशियायी देशों की ओर इस प्रकार से देखना जैसे कि वे एक इस प्रकार के देश हैं जिन्हें अन्य देशों की पंक्ति में आ जाना चाहिये। इस युग में सब से महत्वपूर्ण बात यह है कि आज एशिया के अन्दर क्या हुआ है और यहां पर किन बातों के होने की सम्भावना है। इसमें तो कोई सन्देह नहीं है कि आज सम्पूर्ण एशिया जाग्रत हो चुका है। वह बेचैन हो रहा है और उसकी आत्मा विद्रोह करना चाहती है। अब सवाल इस बात का है कि आप इन बातों को किस प्रकार सुलझायेंगे? ये जो सारी समस्यायें हैं इनका सम्बन्ध सैनिक शक्ति से नहीं अपितु मनुष्य के मस्तिष्क से है। इसका हल तोपों से नहीं हो सकता; हो सकता है कि उनकी कभी आवश्यकता पड़े। मैं इस समय इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कह सकता। वास्तव में ये समस्यायें ऐसी हैं जिन्हें मनोवैज्ञानिक रूप से हल किया जाना चाहिये, चाहेये अफ्रीका या एशिया निवासियों की समस्यायें हों। अफ्रीका के अनेक भागों में जिस प्रकार इस समस्या को हल करने की कार्यवाही की जा रही है उसके सम्बन्ध में एक बात बिल्कुल निश्चित है कि यह कार्यवाही अन्त में अवश्य ही असफल रहेगी चाहे आज और चाहे कल। इसमें सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं है। इस बात को बतलाने के लिये किसी अवतार की आवश्यकता नहीं है कि जिस प्रकार से इस समस्या को हल करने की कोशिश की जा रही है उससे जातीय झगड़े अवश्य होकर रहेंगे। दक्षिण अफ्रीका में जो कार्य किये जा रहे हैं उन्हीं को देखिये। इन मूल बातों का सम्बन्ध सुदूर पूर्व, मध्य यूरोप तथा जर्मनी की परिस्थितियों से न हो किन्तु इनका विश्व की आगामी बातों पर प्रभाव पड़ता है। इस मामले में भारत को शान्ति स्थापना की बात करनी चाहिये न कि हमें धमकियों, घृणा तथा युद्ध

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

की बातें करनी चाहियें। अपने विचारों को हमें शक्ति में परिवर्तित करना चाहिये न कि क्रोध भावना में। यह बात हमारे पाकिस्तान से सम्बन्ध के विषय में भी लागू होती है। हमें अपने हितों की रक्षा करनी चाहिये और हम उनकी रक्षा करेंगे। किन्तु ऐसा करने में क्रोध प्रदर्शित करने से तो कोई भी लाभ न होगा। इस प्रश्न को हल करने के दो तरीके हैं। एक तो यह भावना है कि युद्ध अवश्य होगा। चाहे हम इससे बचना भी चाहें युद्ध अवश्यम्भावी है और हमें इसके लिये तय्यार रहना चाहिये और किसी एक गुट्ट में सम्मिलित होना चाहिये। दूसरा तरीका यह है कि हमें इससे बचना चाहिये। इन दोनों तरीकों में बहुत अन्तर है। यदि हम समझते कि युद्ध अवश्यम्भावी है तो हमें इसके लिये तय्यारी करनी चाहिये और यदि हम युद्ध से बचना चाहते हैं तो हमें इस बात में विश्वास करना चाहिये कि युद्ध होना आवश्यक नहीं है। कोई भी देश इस सम्भावना को नहीं भूल सकता कि उसे भी युद्ध में भाग लेना पड़ जायगा। तो इन दोनों तरीकों में अन्तर है। बहुत से बड़े देश इस बात को मानते हैं कि युद्ध अवश्यम्भावी है। इसका अर्थ यह नहीं कि वे युद्ध चाहते हैं। कम से कम हम तो इस बात में विश्वास करते हैं कि युद्ध अवश्यम्भावी नहीं है और हमें इसको न होने देने के लिये सब प्रयत्न करने चाहियें। राजनैतिक अथवा राजनयिक तरीकों के अतिरिक्त अन्य तरीकों से भी इससे बचा जा सकता है। मानव भावना तथा मनोवैज्ञानिक भावना से इससे बचा जा सकता है।

सदन को हाल ही की घटनाओं का पता है। सुदूर पूर्व के सम्बन्ध में अमेरिका में सर्वोच्च अधिकारियों ने कुछ वक्तव्य दिये जिन से हमें तथा विश्व के अन्य देशों को भी बड़ी चिन्ता हुई। मैं नहीं जानता कि उन वक्तव्यों का का क्या परिणाम होगा। उनकी जो प्रतिक्रिया हुई उसके विषय में सन्देह नहीं और अन्य बातों के अतिरिक्त इसका बुरा प्रभाव हुआ है। चीन की नाकाबन्दी तथा ऐसी ही बातों से शान्ति स्थापना में सहायता नहीं मिलती। तो क्या हम शान्त रहें? किन्तु यह एक गम्भीर मामला है, इसका दुनिया पर असर पड़ता है। हमारी सरकार तथा देश को इन बातों से बड़ी चिन्ता हुई। इन मामलों में कठोर भाषा की अपेक्षा शान्ति पूर्ण वक्तव्यों से ही दूसरों पर प्रभाव पड़ेगा। हम अपनी सम्मति को स्पष्ट रूप से व्यक्त कर देते हैं। यदि इन बातों से विश्व में खिंचाव बढ़ता है तो हम इसके विरुद्ध हैं और यदि इससे उसे शान्त करने में सहायता मिलती है तो यह बहुत ही अच्छी बात है। इस बात को हम सब जगह लागू करते हैं।

मैं घरेलू नीति के विस्तार में नहीं पड़ना चाहता। विरोधी दल ने भूख, भुखमरी तथा आर्थिक दशा के विषय में बातें कहीं। इस मामले में हम तथ्य तथा आंकड़ों को देखें। भारत जैसे बड़े देश, में दुखी पीड़ित तथा निर्धन व्यक्तियों की सूची बनाना आसान कार्य है। यह हमारा दुर्भाग्य है। इस बात को जानने की कसौटी यह है कि क्या हम इन कठिनाइयों को दूर कर रहे हैं; इस मामले में हम कितने आगे बढ़े तथा इस सम्बन्ध में हम क्या कार्यवाही कर रहे हैं। निस्सन्देह हमारी आर्थिक स्थिति में काफ़ी सुधार हुआ है। मैं समझता हूं कि देश के किसानों की दशा में भी सुधार हुआ है। बिना ज़मीन वाले किसान का भी हमें ध्यान है और उसके लिये हम भरसक प्रयत्न करेंगे। कुछ सीमा तक बिना ज़मीन वाले किसान की दशा में भी सुधार हुआ है। उद्योगों में लगे हुए आदमियों की हालत तो अच्छी है। यद्यपि देश में जनसंख्या बढ़ रही है, फिर

भी मैं समझता हूं कि आम जनता की हालत अच्छी है।

विरोधी दल के कुछ सदस्य रूस ने जो आर्थिक उन्नति की है उससे बहुत अधिक प्रभावित हैं। मैं मानता हूं रूस ने काफी प्रगति की है। फिर भी रूस और अमेरिका में जीवन स्तर बहुत भिन्न है। अमेरिका का जीवन स्तर विश्व में सब से ऊंचा है। इसको यों भी कहा जा सकता है कि रूस में क्रान्ति १९१७ में हुई तो दस वर्ष बाद १९२७ में वहां कितनी उन्नति हुई। वहां गृह युद्ध हुआ और दूसरी भी बहुत सी कठिनाइयां थीं। किन्तु जो उन्नति उन्होंने की मैं उसकी प्रशंसा करता हूं। इसकी यदि अमेरिका से तुलना करनी है तो उस समय से की जाय जबकि रूस में क्रान्ति हुई थी। तब तो यह उचित तुलना होगी। इसके कहने का कोई अर्थ नहीं कि अमेरिका में जीवन स्तर ऊंचा है, क्योंकि अमेरिका ने १५० वर्षों में उन्नति की है। अतः स्वतन्त्रता मिलने के पांच वर्ष बाद ही भारत की तुलना करने का कोई फ़ायदा नहीं। अतः रूस की भारत से तुलना करना उचित नहीं। यदि आप चीन के साथ तुलना करने के लिये कहते हैं तो मैं भी चाहता हूं कि भारत की चीन के साथ सभी प्रकार की तुलना की जाय। मेरा यह अभिप्राय नहीं कि हम चीन से अधिक बुद्धिमान् हैं अथवा हम चीन से आगे बढ़ रहे हैं। किन्तु मेरा कहना तो यह है कि यह ठीक ही है कि हमें देखें कि चीन क्या कर रहा है और उससे लाभ उठायें। दोनों देशों में दशायें भिन्न हैं और एक बहुत बड़ा अन्तर है। चीन वासियों में कठिन कार्य करने की क्षमता है और वे सहयोग कर सकते हैं। और इसमें कोई राष्ट्र उनका मुकाबला नहीं कर सकता। किन्तु एक बहुत बड़ा अन्तर है और वह यह है कि हम प्रजातन्त्रात्मक प्रणाली में कार्य करने का प्रयत्न कर रहे हैं। अतः यह कहना व्यर्थ है कि हम दूसरों से अच्छे हैं। क्योंकि प्रश्न तो यह है कि किस प्रकार के शासन से तथा सरकार से देश को सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक लाभ होता है। अधिक महत्वपूर्ण बात तो यह है कि कोई समुदाय या देश विचार या अन्य प्रकार की स्वतन्त्रता के वातावरण में पनपता है या नहीं। किन्तु हम ने तो प्रजातन्त्रात्मक प्रणाली को चुना है जो कि हमारे देश के लिये अच्छी है। हम दूसरों को कुछ करने के लिये बाध्य नहीं करते। आज कल हम अपने देश के पुनर्निर्माण या विकास कार्य में संलग्न हैं। यद्यपि मैं यथार्थ रूप से तो नहीं जानता फिर मैं यह कह सकता हूं कि जो बड़े बड़े निर्माण कार्य हम कर रहे हैं उनके सम्बन्ध में भारत और चीन के बीच तुलना नहीं हो सकती। चीन भी बड़े कार्य कर रहा है किन्तु इस मामले में कोई तुलना नहीं हो सकती। आजकल भारत कुछ इतने बड़े कार्य कर रहा है कि जिनकी तुलना अन्य देशों में होने वाले कार्यों से की जा सकती है। किन्तु कठिनाई तो आज की आवश्यकताओं तथा कल की आवश्यकताओं के बीच पैदा होती है। एक गरीब देश के पास कल के निर्माण कार्यों में विनियोजन करने के लिये बड़े संसाधन नहीं होते। प्रजातन्त्रात्मक प्रणाली का ध्येय वर्त्तमान आवश्यकताओं को ही पूरा करना नहीं होता। हो सकता है कि संकट काल में ऐसा हो। प्रजातन्त्र और एक सत्ताधारी शासन में एक यह भी अंतर है। एक सत्ताधारी शासन आज की समस्या पर ज्यादा जोर न देकर आने वाली स्थिति को ही अधिक महत्व देता है। प्रजातन्त्रात्मक शासन में ऐसा नहीं हो सकता क्योंकि आप जितने सदस्य यहां हैं, यदि ऐसा करने लगें तो अगले चुनाव में सफल होना मुश्किल है। प्रजातन्त्रात्मक प्रणाली की यही एक कठिनाई है। हम प्रजातन्त्र की बातें तो बहुत करते

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

हैं किन्तु यह अपेक्षाकृत नया रूप है। प्रजातन्त्र अपने पुराने रूप में सीमित था; उसमें सीमित मताधिकार जैसी बातें थीं। भारत में व्यस्क मताधिकार है और यहां दुनिया के सबसे अधिक मतदाता हैं। मैं प्रजातन्त्र की प्रशंसा करता हूं किन्तु मैं यह मानने के लिये तय्यार नहीं हूं कि बहुमत की बात सदा ठीक ही होती है।

हम जानते ह कि लोगों को कैसे उकसाया जा सकता है। क्या यह सदन भीड़ के सामने चाहे वह जनतन्त्रवादी लोगों की भी क्यों न हो, झुक जायगा? साढ़े पांच साल पहिले दिल्ली में क्या हो रहा था—क्या यह जनतन्त्रवाद था, जबकि लोग एक-दूसरे की हत्या कर रहे थे और मारमार कर भगा रहे थे? मैं इन बेचारों को कोई दोष नहीं देता जनतन्त्रवाद को उकसा कर उससे गलत बातें कराई जा सकती हैं। सच तो यह है कि शायद कई बार जनतन्त्रवाद व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक युद्धप्रिय होता है।

हमें काम करना है। यहां महान् परीक्षण किये जा रहे हैं और हमें जनतन्त्रवादी तरीकों के अनुसार भारत का निर्माण करना है। अन्त में हमने यही निर्णय किया है; क्योंकि अन्ततोगत्व जनतन्त्रवाद के आदर्श सबसे ऊंचे हैं और उन में हमारा विश्वास है। अब हम मानवी गुणों की बातें कर रहे हैं। कई माननीय सदस्यों ने इस सम्बन्ध में विचार किया होगा। लोग कहते हैं कि जनतन्त्रवाद में मानवी गुण हैं। परन्तु युद्ध इन्हीं गुणों को समाप्त कर देता है। युद्ध काल में जनतन्त्रवाद ठीक ढंग से कार्य नहीं करता। इस स्थिति में दुखपूर्ण बात तो यह है कि हम जनतन्त्रवाद की रक्षा के लिये युद्ध करते हैं जिससे कि मानवी गुणों की रक्षा हो सके। परन्तु क्योंकि हम उनकी रक्षा के लिये गलत ढंग अपनाते हैं हमारा उद्देश्य पूरा नहीं होता। पिछले दो महायुद्धों में यही हुआ है और यदि एक और लड़ाई हो गई तो उसके परिणाम इससे भी बुरे होंगे।

मैं माननीय सदस्यों से प्रार्थना करूंगा कि देश की आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में इस बात का भी ध्यान रखें। वे सरकार की आलोचना या निन्दा करें इस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं। हम सभी देश के निर्माण कार्य में जुटे हुए हैं। और यदि कोई नकारात्मक रवैय्या अपना कर देश में निराशा का वातावरण बनाने में सहायता दें तो यह बड़ी गम्भीर बात होगी। इसका बड़ा महत्व है। क्योंकि लोगों की मनस्थिति सरकारी आदेशों से अधिक महत्व रखती है। मुझे यह बताते हुए बड़ी प्रसन्नता होती है कि पिछले पांच या छै महीनों में लोगों ने बड़े उत्साह के साथ उन योजनाओं को आगे बढ़ाने में सहयोग दिया है जो हमने देश के सामने रखी हैं। कुछ सौ मील लम्बी सड़कें बनाना या तालाब खोदना—इनका महत्व तो है परन्तु इससे भी अधिक महत्व लोगों के उत्साह की भावना का है जो उन्होंने यह काम करने में दिखाई। हम इसी भावना का सहारा ले सकते हैं और इसी से हमारी पंचवर्षीय या दूसरी योजनायें सफल होंगी। यदि यह भावना न हो तो सरकार की कोई भी आज्ञा या संगठन अधिक लाभकारी नहीं हो सकता।

अतः मैं माननीय सदस्यों से प्रार्थना करूंगा कि वे देश में यह भावना उत्पन्न करने या इसमें रोड़ा अटकाने में सहायक हो सकते हैं। देश में निराशा का वातावरण उत्पन्न करने के लगातार प्रयत्नों से वे उद्देश्य पूरे नहीं किये जा सकते जो इस सदन में सभी को प्रिय हैं।

अभी मैंने पंचवर्षीय योजना की चर्चा की है। बहुत से माननीय सदस्य इसे पढ़ चुके

होंगे और कइयों ने इसकी आलोचना भी की है। अब जैसा कि मैं पहिले ही कह चुका हूं यह योजना कोई बड़ी पवित्र नहीं है। मेरे विचार में तो इसका बनाना ही बहुत बड़ा प्रयत्न है। यह अनिवार्य था क्योंकि इसके बिना हम कोई कार्य नहीं कर सकते। हम चाहें स्कूल के छात्रों का वाद-विवाद समझ कर सिद्धान्त रूप से कुछ भी कहते रहे हैं, यह योजना आवश्यक है। इसमें हमने जमीन और अनाज आदि के सम्बन्ध में अपनी नीति निर्धारित की है। मेरे विचार में यह ठीक नीति है। आप हमें विश्वास दिला दीजिये कि यह गलत है तो हम इसे बदल देंगे। यह कोई ऐसा कानून तो नहीं है जो बदला न जा सकता हो। हम तो चाहते हैं कि तेजी से काम हो। लेकिन हमें ऐसी बातें करने के लिये कहने का कोई लाभ नहीं जो हमारे बस से बाहर हैं। हम खतरा तो उठा सकते हैं लेकिन सोच समझ कर आखिर इस योजना को लागू करने की बड़ी भारी जिम्मेदारी है। हम कोई जुआ तो नहीं खेल सकते। इसलिये आप इस भावना से पंचवर्षीय योजना को देखिये। मुझे विश्वास है कि इस सदन में कोई भी ऐसा नहीं जो इसके ८० या ९० प्रतिशत भाग से असहमत हो।

कल डा० श्यामा प्रसाद मुकर्जी ने संक्षिप्त रूप से सामुदायिक परियोजनाओं की चर्चा की थी।

श्री नम्बियार (मयूरम्) : और औद्योगिक नीति ?

श्री जवाहरलाल नेहरू : मैं कुछ ही वाक्य कहूंगा। हमारा विश्वास है कि देश का औद्योगीकरण होना चाहिये और औद्योगिक नीति का आधार यह हो कि इस्पात जैसे मूल उद्योगों का विकास किया जाय। परन्तु इसके साथ हमारा यह विश्वास भी है कि कृषि के कमजोर रहते हुए औद्योगिक विकास की नींव भी पक्की नहीं होगी इसलिये हम कृषि को मजबूत बनाये बिना उद्योगों का विकास नहीं कर सकते। और खाद्य का भी बहुत महत्व है। यदि हमें अनाज के लिये दूसरे देशों पर निर्भर रहना पड़े तो यह बुरी बात होगी। इसलिये हमें अपने देश को खाद्य के सम्बन्ध में आत्मनिर्भर बनाना पड़ेगा और साथ ही कृषि का विकास करना होगा। नहीं तो हमारा औद्योगिक ढांचा छिन्नभिन्न हो जायेगा। मैं विस्तारपूर्वक तो कुछ नहीं कह सकता परन्तु यहां किसी को यह नहीं सोचना चाहिये कि हम औद्योगिक विकास को पर्याप्त महत्व नहीं देते हैं। यदि कोई माननीय सदस्य कोई ऐसा सुझाव दे सकें जिससे हमारा काम तेजी से हो तो हम बड़ी खुशी से उसे स्वीकार कर लेंगे।

मैं अभी यह कह रहा था कि सामुदायिक योजनाओं को शुरू हुए दो तीन ही महीने हुए हैं। मेरा अपना विचार यह है कि सब बातों को देखते हुए, यह योजनायें ठीक प्रकार से चल रही हैं।

डा० श्यामा प्रसाद मुकर्जी के सारे भाषण में जम्मू में प्रजा परिषद् के आंदोलन की चर्चा थी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस मामले का भी महत्व है। परन्तु हमें समस्याओं के महत्व को सापेक्षतया देखना चाहिये। नहीं तो हम भूल-भुलैय्यों में पड़ जायेंगे। माननीय सदस्य ने जिस ढंग से जम्मू की समस्या हमारे सामने रखी उस से ऐसा जान पड़ता था कि सबसे महत्वपूर्ण समस्या यही है। मैं इसका महत्व तो मानता हूं परन्तु हमें किसी बात के सम्बन्ध में जोश में आकर अधिक महत्वपूर्ण बातों को भूल नहीं जाना चाहिये।

आज स्थिति ऐसी है कि संसार पर कई तरह के खतरे मंडरा रहे हैं। आप अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को देखिये और भारत में जो कुछ

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

हो रहा है उसे देखिये और फिर जम्मू की समस्या पर विचार कीजिये।

माननीय सदस्य ने इस बात पर क्रोध प्रकट किया है कि उन्हें कुछ ऐसी बातें कही गई हैं जिन्हें वह गाली समझते हैं। उन्होंने सबसे अधिक आपत्ति इस गाली पर की उन्हें सम्प्रदायवादी कहा गया। मुझे सबसे पहिले इस बात पर खुशी प्रकट करनी है कि वह सम्प्रदायवादी शब्द को गाली समझते हैं। मुझे आशा है कि वह धीरे धीरे अपने बायीं ओर बैठने वाले साथी को अपने विचारों का बना लेंगे (**डा० एन० बी० खरे** : कभी नहीं; कभी नहीं) क्योंकि मुझे याद है कि वे सम्प्रदायवादी होने में बड़ा गर्व मानते हैं।

डा० एन० बी० खरे (ग्वालियर) : ठीक ढंग का सम्प्रदायवादी ।

श्री जवाहरलाल नेहरू : माननीय सदस्य ने कहा था : सम्प्रदायवादी कौन है और सम्प्रदायवाद क्या है। आइये हम एक जगह बैठ कर इस बात का निर्णय करें। मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है परन्तु मुझे उनकी इस बात से बड़ा आश्चर्य हुआ। भारत का पिछले तीस वर्ष का इतिहास हमारे सामने है और हमें मालूम है कि इस कालावधि में सम्प्रदायवादी कहे जाने वाली संस्थाओं ने क्या किया है। और हमें याद है कि ३० जनवरी १९४८ को एक पागल युवक ने एक सबसे महान् व्यक्ति की हत्या कर दी थी। मैं नहीं जानता कि मेरे माननीय मित्र इन घटनाओं की कैसे व्याख्या करते हैं। परन्तु होता यह है कि दक्षिण पंथी दल जब यह देखते हैं कि सामाजिक स्तर पर उनका कोई प्रभाव नहीं तो वे अपनी प्रतिक्रियावादी नीतियों को छिपाने के लिये धर्म का आवरण ओढ़ लेते हैं। उन्होंने धर्म के नाम पर राजनीति में अनुचित लाभ उठाया है और लोगों को भड़काया है। हम जानते हैं कि मुस्लिम लीग ने ऐसा बहुत कुछ काम किया। हिन्दुओं ने और सिखों की अन्य संस्थाओं ने भी यही काम किया। हमारे राष्ट्र में एक मूल कमजोरी है। जाति भेद, प्रान्तीयता और धर्मवाद यह सब हमारी कमजोरियां रही हैं और इन्हीं के कारण हमने ठोकरें खाई हैं। लोग इन बातों से अनुचित लाभ उठा जाते हैं। धर्म या जाति के नाम पर लोगों को भड़काया जा सकता है और बाद में फिर इससे पछताना पड़ता है। यही सब सम्प्रदायवाद है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि सम्प्रदायवाद न होता तो देश का बटवारा न होता और बहुत सी ऐसी बातें न होतीं जो हुई हैं। हम राष्ट्रीय आन्दोलन के दिनों में सम्प्रदायवाद को किसी हद तक रोक सके थे लेकिन इतना नहीं रोक सके कि देश का बटवारा न हो और न ही हम मुसलिम लीग से सम्बद्ध कुछ दलों पर अपना प्रभाव डाल सके। सवाल यह नहीं है कि मैं ने बटवारा क्यों स्वीकार किया। यह तो मामूली बात है। हमें लोगों से और उनकी इच्छाओं से वास्ता पड़ा। आज की दुनिया में आप शक्ति का प्रयोग करके लोगों को नहीं दबा सकते। आपको उनके दिलों पर काबू पाना होगा, नहीं तो वे आपके लिये बुरे बन जायेंगे। मैं तो यहां तक कहता हूं कि जिन लोगों की संख्या देश की जनसंख्या का १ प्रतिशत ही है उन्हें भी यह अनुभव कराना होगा कि उनकी स्थिति भी अन्यों के समान है। भारत में चार करोड़ मुसलमान रहते हैं। पाकिस्तान और इण्डोनेशिया को छोड़ कर और किसी देश में इतने मुसलमान नहीं रहते। कोई भी ऐसा प्रचार जिससे इन लोगों को यह अनुभव हो कि ये सुरक्षित नहीं हैं या इन्हें अपने विकास के समान अवसर प्राप्त नहीं हैं, राष्ट्रविरोधी तथा सम्प्रदायिक बात है।

डा० एन० बी० खरे : क्या इसका मतलब यह है कि जो भी बात मुसलमानों के पक्ष में है वह राष्ट्रवादी है ?

श्री जवाहरलाल नेहरू: आप दिल्ली में ही देख लीजिये; बाजार में आप को कुछ संस्थायें गांधी जी के हत्यारे गोडसे की प्रशंसा करती मिलेंगी।

डा० एस० पी० मुकर्जी (कलकत्ता दक्षिण-पूर्व): यह कहां हुआ ? आप बड़ा गम्भीर आरोप लगा रहे हैं। हमने यह बात कहीं नहीं सुनी।

श्री जवाहरलाल नेहरू: म यहां किसी माननीय सदस्य पर आरोप नहीं लगा रहा हूं। मैं ऐसे दो तीन उदाहरण दे सकता हूं जबकि ऐसी बातें कही गई। मैं तो यह कहता हूं कि ऐसा वातावरण उत्पन्न कर दिया जाता है कि लोग जोश में आ जाते हैं।

डा० एस० पी० मुकर्जी: मेरी आप से यही प्रार्थना है कि अपने सभी सूचनादाताओं पर विश्वास न करें।

श्री ए० घोष (बर्दवान): हिन्दू सभा के सम्मेलन के समय कलकत्ते में एक जुलूस निकला था जिसके पोस्टरों पर लिखा था: "गोडसे जिन्दाबाद"।

पंडित सी० एन० मालवीय (रायसेन): भोपाल में डा० खरे, श्री एन० सी० चटर्जी और श्री देशपांडे के नेतृत्व में निकाले गये एक जुलूस में यह नारा लगाया गया था:

अमृतसर से आई अवाज़
वीर गोडसे जिन्दाबाद।

श्री एन० सी० चटर्जी (हुगली): यह बिल्कुल निराधार आरोप है और मन-घड़न्त बात है।

श्री जवाहरलाल नेहरू: मैं तो इस मामले में इस संसद् में अपने माननीय साथियों द्वारा दी गई सूचना के आधार पर ऐसा कह रहा था। मैं घृणा के उस वातावरण की बात कर रहा था जिससे वह सारा सम्प्रदायवादी दृष्टिकोण पैदा हुआ। माननीय सदस्य ने भारत के साथ काश्मीर के पूर्ण एकीकरण के विषय में बहुत कुछ कहा, जिस विषय को मैं स्वयं सर्वाधिक प्राथमिकता देता हूं। इसकी तुलना में मैं पंचवर्षीय योजना या अन्य कार्य को द्वितीय प्राथमिकता देता हूं। भारत में मुख्य कार्य भारत का उचित एकीकरण है। इस एकीकरण से संवैधानिक तथा कानूनी एकीकरण से हो केवल अभिप्राय नहीं है अपितु भारत के लोगों के मस्तिष्क और हृदयों के एकीकरण से है। हमने दो परस्पर विरोधी बातों से अर्थात् (१) हम अंग्रेजी शासन के अधीन थे तथा (२) अंग्रेजी शासन के विरुद्ध राष्ट्रीय आन्दोलन, एकता की भावना प्राप्त की।

श्री वी० जी० देशपांडे (गुना): और तीसरे हिन्दू संस्कृति से।

श्री जवाहरलाल नेहरू: माननीय सदस्य को मिथ्या भ्रान्ति है। यह बात अन्य प्रसंग में महत्वपूर्ण हो सकती है, इसमें नहीं। क्योंकि इससे राजनैतिक एकता नहीं सांस्कृतिक एकता प्राप्त हुई जो कि एक भिन्न बात है। किन्तु इसके साथ हमारे अन्दर फूट की भावना भी है जो कि सम्प्रदायवाद, प्रान्तीयता, जातीयता तथा प्रादेशिक भावना के रूप में दिखाई देती है। हमारा देश एक बड़ा देश है और प्रश्न यह है कि क्या एकता की भावना फूट की भावना से प्रबल है। और इस में खतरा इस बात का है कि जो लोग इस को सोचते नहीं हैं वे यह समझते हैं कि उनमें एकता है। वे फूट की भावनाओं का अनुसरण करते हैं और तब वे उन्हें रोक नहीं सकते। अतः भारत के लोगों के मस्तिष्क तथा हृदय के एकीकरण की ही वास्तविक समस्या है। यह कानून या संविधान का मामला नहीं है। इसी दृष्टि-कोण से काश्मीर के प्रश्न की हल करना पड़ेगा, किसी दूसरे से नहीं।

अब मैं सदन को पिछले इतिहास के बारे में कुछ बताना चाहता हूं। जब काश्मीर भारत में मिला तो वह अन्य राज्यों के समान ही

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

मिला। उस समय गवर्नर जनरल लार्ड माउन्टबैटन ने तथा काश्मीर के महाराजा ने कागजों पर हस्ताक्षर किये थे। उसके ठीक बाद ही काश्मीर में युद्ध शुरू हो गया। और स्वाभाविक रूप से उस कारण से तथा अन्य कारणों से काश्मीर का मामला एक विशेष मामला बन गया। उसके कुछ दिनों बाद यह मामला संयुक्त राष्ट्र संघ को निर्दिष्ट किया गया। इन सब बातों तथा काश्मीर के मिलने से पहिले भी हमारी नीति यह थी, जिसकी घोषणा सरकार ने, सरदार पटेल तथा मैंने औपचारिक रूप से की थी कि जो राज्य भारत में मिलना चाहता है उसके लिये तरीका यह है कि उस राज्य का राजा इस प्रवेशन सम्बन्धी कार्य को करे। किन्तु यदि इसमें कोई सन्देह या चुनौती हो तो उस राज्य के निवासी इस विषय में निर्णय कर सकते हैं। हमारी यह नीति काश्मीर के मामले में पहिले से थी। और जब काश्मीर का मामला आया तो हमें यही नीति लागू करनी पड़ी। अतः जब मैंने काश्मीर के भारत से मिलने की घोषणा की तो मैंने कहा था कि काश्मीर भारत में पूर्ण रूप से मिला है और इसमें किसी प्रकार की कोई कमी नहीं थी। हमारी नीति के अनुसार काश्मीर के निवासी ही, यदि वे चाहें तो इस मामले का अन्य प्रकार से निर्णय कर सकते हैं। जब हमने काश्मीर के प्रवेशन को स्वीकार किया तो उस समय भी हमने वहां की सबसे बड़ी लोकप्रिय संस्था का अनुमोदन प्राप्त किया।

लगभग एक वर्ष के पश्चात् हमने अन्य राज्यों के प्रश्न पर विचार किया कि हमें उनके एकीकरण के सम्बन्ध में और क्या कार्यवाही करनी चाहिये। मैं चाहता हूं कि सदन प्रवेशन (एक्सेशन) तथा एकीकरण के अन्तर को याद रखे। राज्य प्रवेशन तो पूर्ण होता है। और राज्य प्रवेशन में वहां का क्षेत्र भारत क्षेत्र का ही भाग हो जाता है। अतः राज्य प्रवेशन से वहां के नागरिकों को भारतीय नागरिकता आदि मिल जाती है। एकीकरण में तो एक प्रकार का सम्बन्ध स्थापित किया जाता है अथवा उस राज्य को स्वायत्त शासन मिल जाता है। आप कह सकते हैं कि भिन्न भिन्न भागों के राज्यों का एकीकरण भिन्न भिन्न प्रकार से हुआ है। प्रत्येक राज्य में एकीकरण तथा स्वायत्त शासन के मामले में भिन्नता है। कुछ दिनों तक यही प्रश्न था कि भाग 'ख' राज्यों की क्या स्थिति होगी और हमारे संविधान में उनकी क्या स्थिति होनी चाहिये। किन्तु सौभाग्य से ऐसे मामले तब उठे जब हम स्वतन्त्रता मिलने के बाद अपने ऐसे कार्यों को कर सकते थे। और सरदार पटेल ने अपने अदम्य उत्साह तथा योग्यता से कुछ राज्यों का निकटतर एकीकरण किया और कुछ राज्यों में समानता स्थापित की। यदि आज हमें बड़े राज्यों की समस्या का सामना करना पड़े तो यह मामला इतना सरल नहीं होगा। यह ठीक है कि वित्तीय मामलों तथा आर्थिक मामलों का विचार करने के लिये एक उप-समिति नियुक्त की जा सकती है। और पहिले ही वर्ष में सब बातें तय हो सकती हैं। किन्तु अब ऐसा करने में बहुत समय लगेगा। चूंकि आजकल नई नई बातें होती हैं अतः वित्त मंत्री को इन सब बातों के होते हुए भी तर्कों का सामना करना पड़ता है। अतः यदि यह बात उन सभी राज्यों पर लागू हो जिनके मामले में काश्मीर जैसा मूल प्रश्न सन्निहित नहीं है तो उनके मामले में वित्तीय एकीकरण तथा अन्य प्रश्नों को तय करना सरल काम नहीं है।

माननीय सदस्य ने बार बार कहा कि मैंने प्रजा परिषद् के लोगों से मिलने से मना कर दिया था और मैंने उनके साथ राजनैतिक अछूतों का सा व्यवहार किया। किन्तु वास्त-

विक बात यह है कि लगभग एक वर्ष पूर्व मैं प्रजा परिषद् के प्रधान पंडित प्रेमनाथ डोगरा से दिल्ली में मिला और उनके साथ काफ़ी बातें की थीं। हमने जम्मू तथा काश्मीर से सम्बन्धित बुनियादी मामलों पर बातचीत की। उस समय यह वर्त्तमान आन्दोलन नहीं चल रहा था। किन्तु उस समय एक और प्रकार का आन्दोलन चल रहा था। उनसे बातें करने के बाद मैंने यह समझा कि उन्होंने मेरे विचारों को स्वीकार कर लिया। मैंने उन्हें बताया कि विशेष कर जम्मू के सम्बन्ध में वह जिस नीति का अनुसरण कर रहे हैं? वह उसके लिये अहितकारी है। उन्होंने "हां" कहा। मैंने समझा कि उन्होंने मेरी बात मान ली थी। दो दिन बाद ही मैंने समाचार पत्रों में प्रकाशित एक वक्तव्य देखा। मुझे देख कर आश्चर्य हुआ कि वह वक्तव्य उन बातों के विपरीत था। मुझे उससे परेशानी सी हुई। उन के पास चिट्ठियां भेजी गईं कि उन्होंने यह बहुत गलत काम किया है। मैंने यही समझा कि वह ऐसे आदमी नहीं हैं कि उनसे बार बार मिला जाय क्योंकि हमारी हर मुलाकात में ऐसा किया जा सकता है और मुझे हमेशा यह स्पष्ट करना पड़ेगा कि हमारी मुलाकातों में क्या हुआ। उस बात के दो महीने बाद उन्होंने मुझे लिखा कि वह मुझ से मिलना चाहते हैं। मैंने उनको लिख दिया कि हमारी पिछली मुलाकात का कुछ परिणाम नहीं निकला और उससे कुछ कठिनाइयां ही पैदा हो गई थीं। और मैंने उनको यह भी लिखा कि मैं संसद् कार्य में व्यस्त हूं और इस समय उनसे नहीं मिल सकता। इन्हीं दो अवसरों पर ही ये बातें हुइ।

जहां तक आदमियों से मिलने का सम्बन्ध है, माननीय सदस्य को मालूम होना चाहिये कि यह इस बात पर निर्भर करता है कि मेरे पास समय कितना है। मुझे तो लोगों से मिलने में प्रसन्नता ही होती है किन्तु मेरे पास सीमित समय होता है। प्रजा परिषद् की बात को लेते हुए यहां मैं दूसरे सदन में विरोधी दल के एक बड़े प्रतिष्ठित नेता आचार्य नरेन्द्रदेव द्वारा दिये गये भाषण का उद्धरण देना चाहता हूं। उन्होंने कहा था कि काश्मीर का प्रश्न एक नाजुक प्रश्न है और इस मामले पर मैं कोई अधिकृत राय प्रकट नहीं कर सकता हूं। किन्तु इतना मैं उत्तरदायित्व रूप में कह सकता हूं कि यह एक सम्प्रदायिक आन्दोलन है और परिषद् पुराने आर० एस० एस० का ही स्वरूप है। इसने भूमि सुधार आन्दोलन का विरोध किया और महाराजा का समर्थन किया था। जब आर० एस० एस० को दबाया गया था तो इसने अपना नाम प्रजा परिषद् रख लिया। मेरा यह कहना है कि यह आन्दोलन असामयिक है तथा इस पर अच्छी प्रकार से विचार नहीं किया गया है। इससे हमारे बड़े हितों की हानि होने की सम्भावना है। उस क्षेत्र में वहां जनता भी उसमें भाग ले रही है। हमें वे वास्तविक कारण जानने चाहियें जिनसे जनता उन सम्प्रदायिक लोगों के साथ हो गई। मैं चाहता हूं सम्प्रदायिक नेताओं को जनता के सम्पर्क में ना आने दिया जाय। अतः हमें उन कारणों को भली भांति समझना चाहिये जिनसे देश के बहुत से लोग इन सम्प्रदायवादी लोगों के संगठन में सम्मिलित होते हैं।

डा० एस० पी० मुकर्जी: और उन्होंने यह भी तो कहा था कि दमन करने से काम नहीं चलेगा।

श्री जवाहरलाल नेहरू: मैं माननीय सदस्य को यह आश्वासन दे सकता हूं कि मैं इस बात को मानता हूं कि दमन करने से समस्या कभी हल नहीं होती। इसमें कोई

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

सन्देह नहीं। माननीय सदस्य ने यह आपत्ति की थी कि काश्मीर में हिन्दुओं पर स्थानीय सेना (मिलिशिया) द्वारा अत्याचार किया जा रहा है। परन्तु इस सम्बन्ध में मैं उन्हें बता देना चाहता हूं कि स्थानीय सेना की कुल संख्या ५,७२० है जिसमें से १,८५९ मुसलमान, २,७६७ हिन्दू, ४५६ बौद्ध, ६१८ सिख तथा २४ अन्य लोग हैं। इस प्रकार आंकड़ों को देखने से पता लगता है कि वहां की स्थानीय सेना में अधिकतर लोग हिन्दू ही हैं। दूसरी बात इस सम्बन्ध में जो मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि राज्य में जो पहिली सेना थी उसमें अधिकतर लोग जम्मू प्रान्त से भरती किये जाते थे। काश्मीरियों का तो उसमें लिया जाना ही मुश्किल था। अतएव जो स्थानीय सेना है वह एक हिन्दू सेना है।

मैं प्रजा परिषद् के आन्दोलन पर अधिक नहीं कहना चाहता हूं। मैं इसे मानता हूं कि दमन से काम नहीं चल सकता; और दूसरे जनता की आर्थिक तथा अन्य शिकायतें दूर की जायें। और जैसा कि आचार्य नरेन्द्रदेव ने कहा ग़लत रास्ते पर ले जाने वाले नेताओं से भी उसका सम्पर्क नहीं रहना चाहिये।

डा० एस० पी० मुकर्जी: यह बात जनता के निर्णय पर छोड़ दी जाय।

श्री जवाहरलाल नेहरू: इसका निर्णय मैं तो नहीं कर सकता। इसका तो निर्णय जनता ही करेगी। इस समस्या के दो भाग हैं, एक भाग का सम्बन्ध तो भूमि सुधार से है तथा दूसरा राजनैतिक तथा संवैधानिक भाग है। मुझे यह बात बड़ी अजीब लगती है कि एक दल जम्मू में आन्दोलन करके हमारे संविधान में रुकावट डालना चाहता है और काश्मीर और भारत के सम्बन्ध तथा पाकिस्तान से हमारे सम्बन्ध जैसे मामलों और समस्याओं में अड़चनें डालना चाहता है।

यह भी एक विचित्र बात है कि हमसे यह कहा जाता है कि हम इसमें कुछ करें अथवा इस बात का आश्वासन दें कि हम इस सम्बन्ध में कुछ कार्यवाही करेंगे जिनका कि महत्वपूर्ण परिणाम हो सकता है। पांच छै महीने पहिले भारत सरकार तथा काश्मीर सरकार के प्रतिनिधियों ने इस मामले पर काफ़ी विचार किया और वहां कुछ बातों पर समझौता हुआ जिसे कि उस परिस्थिति में हमने उपयुक्त समझा। हमने देखा कि पहिले की अपेक्षा काश्मीर का एकीकरण बढ़ ही गया। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि वित्तीय एकीकरण या अन्य जो भी एकीकरण आवश्यक है वह तो होगा ही। भारत और काश्मीर के अच्छे सम्बन्धों में कमी नहीं हो रही है। काश्मीर हर प्रकार से हम से सम्बन्धित है।

फिर लोग हम से संयुक्त राष्ट्र संघ के विषय में कहते हैं। इस मामले में मुझे कुछ कठिनाई अनुभव होती है। मैं इस प्रश्न पर नहीं जाना चाहता कि चार पांच वर्ष पूर्व की गई कार्यवाही ठीक थी या गलत। मैंने जो कुछ भी किसी समय कहा मैं उसे वापिस नहीं लेना चाहता। विदेशों में हमारा बहुत सम्मान है। और किसी ऐसे कार्य करने से कोई लाभ नहीं जिससे उस सम्मान को धक्का लगे। यह सच है कि कुछ देशों ने अपनी राय के अनुसार कुछ सुझाव रखे हैं, किन्तु हम उन सुझावों को स्वीकार नहीं कर सकते हैं क्योंकि उनके विचार हम से भिन्न हैं। मेरे माननीय मित्र ने मुझ से कहा था कि मैं काश्मीर के सम्बन्ध में प्रजा परिषद् से बातचीत करूं तथा इस सम्बन्ध में सारी बातों को जनता के सामने रखूं। परन्तु मैं यह कहना चाहता हूं कि मैं इस मामले को किसी व्यक्ति विशेष के साथ सुलझा सकता हूं। मैं एक बार इस सम्बन्ध में उनसे मिल चुका हूं और मैं अब भी उनसे मिलने के लिये तैयार हूं।

इस सम्बन्ध में मैं आपका ध्यान एक बहुत महत्वपूर्ण बात की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं और वह यह है कि भारत के प्रत्येक राज्य को कुछ सीमा तक स्वायत्तता प्राप्त है। यदि आज उत्तर प्रदेश में कोई अशान्ति हो जाती है तो हम वहां के विरोधियों को बुला कर उनसे तो समझौता नहीं करते बल्कि उत्तर प्रदेश की सरकार से ही इस सम्बन्ध में बातचीत करते हैं। अतः विरोधियों के साथ बातचीत करके कोई मामला एक दम से तय नहीं किया जा सकता है। यह प्रतिष्ठा का सवाल नहीं है। सवाल इस बात का है कि हम इस काम को ठीक ढंग पर तथा कुशलता के साथ करते हैं।

उपाध्यक्ष महोदय : यदि कोई माननीय सदस्य अपना संशोधन पृथक् रूप से प्रस्तुत करवाना चाहते हैं तो मैं ऐसा करने के लिये तय्यार हूं। अन्यथा मैं सब संशोधनों को एक साथ रखूंगा।

श्रीमती सुचेता कृपलानी (नई दिल्ली) : मैं चाहती हूं कि मेरा संशोधन पृथक् रूप से रखा जाय।

प्रस्ताव के अन्त में निम्न लिखित जोड़ दिया जाय।

> "but regret that there is no adequate appreciation in the address of the deteriorating economic condition and growing unemployment in the country nor any indication of any effective measures to tackle it."

> ["किन्तु इस बात का खेद है कि अभिभाषण में देश की बिगड़ती हुई आर्थिक दशा तथा बढ़ती हुई बेकारी पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है और न ही उनके सुलझाने के सम्बन्ध में किसी प्रभावी कार्यवाही के किये जाने का संकेत किया गया है।"]

उपाध्यक्ष महोदय द्वारा संशोधन प्रस्तुत किया गया।

इस पर सदन में मत विभाजन हुआ। पक्ष में ६४ तथा विपक्ष में २८४।

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

इसके पश्चात् उपाध्यक्ष महोदय द्वारा श्री पी० एन० राजभोज, डा० लंका सुन्दरम्, श्री एम० एस० गुरूपादस्वामी, श्री बी० एस० मूर्त्ति, श्री रिशांग किशिंग, श्री एन० पी० दामोदरन्, श्री राघवाचारी, डा० जयसूर्य, श्री पी० सुब्बाराव, श्री यू० सी० पटनायक, श्री तुषार चटर्जी, श्री बीरेन दत्त, श्री एन० बी० चौधरी, डा० रामाराव, श्री गिडवानी, श्री नम्बियार, श्री चट्टोपाध्याय, डा० एन० बी० खरे, श्री केलाप्पन, श्री के० सुब्रह्मण्यम्, श्रीमती सुचेता कृपलानी, श्री गुरुपादस्वामी, श्री शिवमूर्त्ति स्वामी, श्री एन० एस० देव, श्री वी० जी० देशपांडे, डा० एन० बी० खरे, श्री फ्रैंक एन्थनी, डा० जाटव वीर, श्री बी० एस० मूर्त्ति, श्री खर्डेकर, श्री एन० आर० एम० स्वामी, श्री वीरस्वामी, श्री एस० बी० एल० नरसिंहम्, श्री पी० एन० राजभोज, श्री नन्दलाल शर्मा, श्री एच० आर० नथानी, श्री नम्बियार तथा श्री गुरुपादस्वामी के प्रस्ताव प्रस्तुत किये गए जो सदन द्वारा अस्वीकृत किए गए।

उपाध्यक्ष महोदय: अब मैं सदन के समक्ष मूल प्रस्ताव रखता हूं।

प्रश्न यह है कि :

निम्नलिखित अभिनन्दन पत्र राष्ट्रपति की सेवा में प्रस्तुत किया जाय :

> "लोक सभा के सदस्य राष्ट्रपति जी के उस भाषण के लिये जो कि उन्होंने ११ फरवरी १९५३ को एक साथ समवेत संसद् के दोनों सदनों के सामने देने की कृपा की थी बहुत कृतज्ञ हैं।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।